अल्पसंख्यकों के अधिकार और शैक्षिक सत्ता

❑ पीट वानडेर प्लोग

अनुवाद - जुगमंदिर तायल

सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों को मान्यता देने की बहस में शैक्षिक-सत्ता के अधिकार का उल्लेख प्राय: अधिकारों के ठोस उदाहरण के रूप में किया जाता है और इस अधिकार को अल्पसख्यकों का एक विशिष्ट अधिकार माना जाता है । यह एक विचित्र बात है, क्योंकि अल्पसंख्यकों के अधिकारों में यह अधिकार ऐसा है जिसे न्यायसंगत सिद्ध करना असंभव है । उदार जनतांत्रिक व्यवस्था के साथ सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों की संगति बैठाने के हाल के प्रयत्नों में जो कठिनाई आई है, उससे प्रकट होता है कि ऐसे समुदायों एवं उनके बालकों और माता-पिताओं एवं उनके बालकों के बीच के संबंधों की जटिल प्रकृति की उपेक्षा तथा उदार लोकतंत्र व नागरिक व्यवस्था पर आने वाले खतरों का अवमूल्यन किये बिना, अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अधिकारों को, खासतौर से, न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता है । 'जर्नल ऑफ फिलॉसफी ऑफ एजुकेशन' से साभार।

प्रस्तावना

अलग सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने की दृष्टि से सांस्कृतिक-अल्पसंख्यकों के अधिकारों को मान्यता देने की बहस में शैक्षिक-सत्ता के अधिकार का उल्लेख प्राय: ऐसे अधिकारों के एक ठोस उदाहरण के रूप में किया जाता है। अपनी सांस्कृतिक विशिष्टता को बनाये रखने के लिए अल्पसंख्यक-समूह अपने बालकों की शिक्षा के मामलों में, ठीक ही, विशेष अथवा अनन्य अधिकारों की मांग करते हैं । व्यापक शैक्षिक-सत्ता के अधिकार को अल्पसंख्यकों का एक महत्वपूर्ण अधिकार माना जाता है ।[1] यह एक विचित्र बात है, क्योंकि अल्पसंख्यकों के सभी अधिकारों में यह ऐसा अधिकार है जिसे न्याय संगत ठहराना लगभग असंभव जैसा ही है। वर्तमान आलेख में इस पर विचार किया गया है कि ऐसा क्यों है ? उदार राजनैतिक दर्शन के साथ सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों की संगति बैठाने के हाल के प्रयत्नों में आने वाली कठिनाइयां इस कार्य में मार्गदर्शक का काम करेंगी। टोमासी (1995) कूकाथस (1992 ए तथा बी), कैम्लिक्का (1989) और गाल्स्टन (1995) द्वारा प्रस्तुत तर्कों से प्रकट होता है कि शिक्षा ऐसा मुद्दा नहीं है जिसे सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों पर पूरी तरह छोड़ा जा सके, यद्यपि उपरोक्त विद्वान यह दावा करते हैं कि उनका मत इसके विपरीत है। विडम्बना यह है कि जो समूह इन अधिकारों की मांग सबसे तेज स्वरों में करते हैं, या जिन समूहों को (उनके समर्थकों के अनुसार) इनकी सबसे ज्यादा जरूरत है अर्थात् अनुदार समुदाय, वे ही इन अधिकारों के सबसे कम पात्र हैं ।

शैक्षिक-दार्शनिकों में भी अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अधिकारों की समस्यामूलक प्रकृति को कम आंकने की प्रवृत्ति दिखलायी देती है । इस प्रवृत्ति का एक विशेष उदाहण 'जर्नल ऑफ फिलासफी ऑफ एजुकेशन' के 'बहु-सास्कृतिक राज्य में जनतांत्रिक शिक्षा' विशेषांक (1995) में प्रकाशित याएल तामिर का आलेख है । मेरी दलीलों को अनुदार संस्कृतियों के प्रति तामिर की उदारता की आलोचना के रूप में पढ़ा जा सकता है ।

उदार चिंतन एवं नागरिक व्यवस्था संबंधी खतरे

अपनी सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने के प्रयत्न में लगे सांस्कृतिक समुदायों को जब विशेष अधिकार दिये जाते हैं तो इस काम में कुछ खतरे भी शामिल रहते हैं । ऐसा करते समय वैयक्तिक स्वतंत्रता तथा अधिकारों की रक्षा के मामले में कुछ समझौते करने पड़ सकते हैं । यही नहीं, सामाजिक-राजनैतिक एकता और विभिन्न समुदायों के बीच अन्तर्क्रिया एवं सहिष्णुता की भावना को भी नुकसान पहुंच सकता है । सांस्कृतिक-अल्पसंख्यकों के अधिकारों के संदर्भ में दो तरह की कीमत चुकानी पड़ती हैं - उदारता के क्षेत्र में कीमत और नागरिक-व्यवस्था के क्षेत्र में कीमत। दूसरे शब्दों में, इस कार्य में दो तरह के खतरे हैं - उदार - चिंतन संबंधी खतरे और नागरिक-व्यवस्था संबंधी खतरे । ये खतरे उस समय भी मौजूद रहते हैं, जब सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों को शैक्षिक सत्ता प्रदान करने संबंधी अधिकारों को मान्यता दी जाती है ।

सतही तौर पर अल्पसंख्यकों को शैक्षिक-अधिकार देने में कुछ भी गलत दिखायी नहीं देता है । आधुनिक जनतांत्रिक व्यवस्था उदार और बहुलवादी व्यवस्था है । यह अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं की रक्षा करती है और विविधता का सम्मान करती है । अल्पसंख्यकों

1. उदाहरण के लिए, देखिए डोनेल्ली, 1990, विशेष रूप से पृ. 56-59; कूकाथस 1992ए, विशेष रूप से पृ. 115, 117, 126; तामिर 1995 पृ. 161-172; वी.वानडिके, 1982 (देखिए, कूकाथस 1992; कैम्लिक्का, 1989) ।

के शैक्षिक अधिकार दोनों के साथ न्याय करते हैं । वे अपने बालकों को शिक्षित करने के अधिकार अथवा उन्हें अपनी विशिष्ट सचाइयों एवं मूल्यों के अनुकूल शिक्षित करने के पैतृक अधिकार (धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकारों सहित) को मान्यता देते हैं । वे विशिष्ट जीवन-शैली तथा विश्वासों (बहुलता, सहिष्णुता, आदरभाव) वाले समूहों के बीच भिन्नता के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करते हैं। किन्तु, बारीकी से जांच करने पर अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अधिकार जनतंत्र में समस्यामूलक सिद्ध होते हैं, क्योंकि कुछ सांस्कृतिक-समुदाय स्वतंत्रता और विविधता के अधिकारों का आदर थोड़ा ही या बिल्कुल भी नहीं करते हैं । कुछ शिक्षा-शास्त्र पाठ्यक्रम तथा शैक्षिक-पद्धतियां सहिष्णुता एवं स्वतंत्रताओं की धारणा को लाभ की जगह नुकसान अधिक पहुंचाती हैं ।

कम से कम चार कारणों से जनतांत्रिक व्यवस्था को अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अधिकारों के प्रति सतर्क रहना चाहिये । पहला तथा चौथा कारण उदारता संबंधी चिन्ता का है और दूसरा तथा तीसरा कारण नागरिक-व्यवस्था संबंधी चिन्ता का ।

(1) शिक्षा बालकों की विचार करने एवं स्वयं निर्णय करने की क्षमता को विकसित करने तथा बढ़ाने की जगह कुंठित और दमित कर सकती है । यह तथ्य बालकों के स्वायत्त विकास में बाधक हो सकता है । जनतंत्रीय सरकार को, बालकों के भावी स्वायत्त विकास की रक्षा के प्रति अपने उत्तरदायित्व के कारण, ऐसी शिक्षा से उनकी रक्षा अवश्य करनी चाहिए । यदि बालकों की भावी स्वतंत्रता को संरक्षा की आवश्यकता नहीं है तो माता-पिताओं की वर्तमान स्वतंत्रता (जैसे पैतृक-अधिकार, धर्म की स्वतंत्रता, आदि) को संरक्षा की आवश्यकता क्यों होनी चाहिए ?

(2) कोई बालकों को ऐसी शिक्षा दे सकता है कि वे अन्य प्रकार की जीवन-शैलियों तथा विश्वासों के प्रतिनिधियों के प्रति असहिष्णु हो जायें; अथवा अन्य समुदायों को जो चीजें प्रेरणा देती हैं, उनके संबंध में वे अज्ञानी रह जायें । इससे बालकों में असहिष्णुता और समझ की कमी उत्पन्न होगी । ऐसी शिक्षा बहुलवादी जनतांत्रिक-व्यवस्था के विपरीत होती है ।

(3) जनतांत्रिक व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता व्यापक राजनैतिक प्रक्रिया में भाग लेने का हरेक को अधिकार होता है । इन प्रक्रियाओं में सार्थक तरीके से भाग लेने के लिए कुछ कौशल एवं अन्तर्दृष्टि और कुछ सामान्य ज्ञान तथा संदर्भित मसलों के ज्ञान की जरूरत होती है । बालक ऐसा कौशल और ज्ञान किसी जादू से प्राप्त नहीं करते हैं । इसके लिए वे शिक्षा पर ही निर्भर होते हैं। जब शिक्षा व्यवस्था पर सार्वजनिक या लोक की सत्ता का अधिकार कम होता है तो सभी बालकों को पर्याप्त ज्ञान के अवसर प्राप्त नहीं होने का खतरा उत्पन्न हो जाता है । ऐसी स्थिति में जनतांत्रिक व्यवस्था का भविष्य दाँव पर लग जाता है ।

(4) तकनीकी संस्कृति तथा जटिल समाज-व्यवस्था में शिक्षा आधारभूत जरूरत होती है । शिक्षा के बिना ऐसी व्यवस्था में जीवन-यापन कठिन है । अत: पर्याप्त ज्ञान मनुष्य का मौलिक अधिकार है । अन्तर्राष्ट्रीय संधियों जैसे आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों के बारे में अन्तर्राष्ट्रीय करार एवं बाल अधिकारों के संबंध में समझौतों के अनुसार बालकों को भी यही अधिकार प्राप्त हैं । उदार जनतांत्रिक व्यवस्था में सरकार को प्रत्येक बालक की आधारभूत जरूरतों को पूरा करने के संबंध में चिन्ता करनी चाहिए । शैक्षिक सत्ता का परित्याग करने पर यह कार्य समुचित तरीके से पूरा नहीं किया जा सकता ।

उदारवाद तथा नागरिक-व्यवस्थाओं से संबंधित जिन चिन्ताओं का और उनसे जुड़े स्पष्ट खतरों का यहां उल्लेख किया गया है, क्या उनसे बचने के लिए सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों को किसी तरह की शैक्षिक सत्ता मुश्किल से ही दी जानी चाहिये ? नही, इसका अर्थ यह नही है । ऐसा करना या नहीं करना उल्लेखित चिन्ताओं के बोध तथा उन्हें दिये जाने वाले महत्व पर निर्भर है । ऐसे समूह जो व्यक्ति के अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं की चिन्ता नहीं करते हैं और बहुलता, सहिष्णुता, समन्वयीकरण, व्यापक राजनैतिक भागीदारी आदि के प्रति थोड़ा ही आदर भाव रखते हैं । उदार व नागरिक-व्यवस्था संबंधी चिन्ताओं पर ज्यादा ध्यान नहीं देते तथा इनमें शामिल खतरों से परेशान नहीं होते ऐसे समूह ही प्राय: वे समूह होते हैं जो अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अधिकारों जैसे सामूहिक सांस्कृतिक अधिकारों की मांग करते हैं । वे समाज में प्रभावी मूल्यों और सचाइयों के प्रति सजग नहीं होते हैं । इस प्रसंग में एमिश (योडेर मामला)[2] तथा ईसाई मूलतत्ववादियों (मोजर्ट मामला)[3] के उदाहरण दिये जा सकते हैं ।

उदार तथा बहुलवादी जनतांत्रिक व्यवस्थाओं को ऐसे अनुदार समुदायों से कैसा व्यवहार करना चाहिए ? क्या उनके प्रति आखिरी सीमा तक सहिष्णु रहकर उन्हें सांस्कृतिक अधिकार, जिनमें शैक्षिक अधिकार भी शामिल हैं, दिये ही जाने चाहिए ? अथवा व्यक्ति के अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं की रक्षा और उदार एवं बहुलवादी जनतांत्रिक व्यवस्था की निरन्तरता बनाये रखने के लिए, उनके प्रति

2. संदर्भ ओ नेयल्ल और डब्लू रुडिक, 1979, पृ. 277-281; गुटमान, 1980, 1995.
3. सन्दर्भ ला फोल्लेटे, 1989; स्टोल्जेनबर्ग, 1993; मासेडो, 1995 ए ।

सीमित सहिष्णुता रख कर सांस्कृतिक अधिकारों पर कुछ रोक लगा देनी चाहिए ?

टोमासी : अनुदार समुदायों के प्रति आदर भाव

टोमासी : (1955)[4] ऐसे लेखक हैं जो अनुदार समुदायों के प्रति बहुत सहृदय हैं । वे खास तौर से ऐसे समूहों को, जिनके लिए उदारता संबंधी खतरे महत्वपूर्ण नहीं हैं , संस्कृति संबंधी अल्पसख्यक-अधिकार देने के पक्ष में हैं । उनके अनुसार 'ऐसे व्यक्ति-परक अधिकारों के धारक के रूप में (जो उदार समाजों में महत्वपूर्ण समझे जाते हैं) जब किसी समाज के सदस्यों में अपने बारे में सोचने की प्रवृत्ति नहीं होती है और वे अपने बारे में सोचने की चिन्ता भी नहीं करते हैं, तब उदारता संबंधी खतरे प्रासंगिक नहीं रह जाते हैं' (पृ. 598, 601-02) ऐसे समूह, जिनके सदस्य स्वयं को व्यक्ति अधिकारों के धारक नहीं समझते हैं, एक अर्थ में 'उदारवाद की सीमाओं से बाहर होते हैं' (पृष्ठ 600) । स्पष्टत: ऐसे समूहों और उनके सदस्यों की नजर में सामूहिक-अधिकार दोषहीन होते हैं । किन्तु उदार जनतंत्रवादी तथा उदार जनतांत्रिक राज्य इस स्थिति को स्वीकार क्यों करें ? टोमासी के अनुसार यह आदर भाव का मसला है। अनुदार होने से वे आदर के लिए अपात्र नहीं हो जाते हैं । 'ऐसी संस्कृतियां भी, जो हमारी संस्कृति के समान नहीं हैं, हमारे आदर के योग्य हैं' (पृ. 600) । 'व्यक्तियों के प्रति आदर के ऐसे रूप भी हैं जिनका उपयोग उदारता के समर्थक अपनी नीतियों तथा कार्यों के लिए कर सकते हैं । उदाहरण के लिए, अपने सांस्कृतिक-समुदाय के प्रति व्यक्तियों का लगाव भी आदर के योग्य है' (602 - 03) । टोमासी तर्क देते हैं कि यदि किसी व्यक्ति का सांस्कृतिक समुदाय अनुदार हो और फिर भी अपने समुदाय से संबंध उसके लिए मत्वपूर्ण हो, तो ऐसे व्यक्ति को उन व्यक्ति-अधिकारों की रक्षा करने से मुक्त माना जाना चाहिए जो उसकी संस्कृति की संरक्षा के लिए खतरा उत्पन्न करते हों । इस दलील से 'उदारवाद की सीमा से बाहर' रहने वाले समूहों के बारे में टोमासी का विलक्षण सुझाव स्पष्ट हो जाता है । 'उदार अधिकारों के धारक के रूप में ही आदर-भाव रखने पर बल नहीं देकर हम ऐसे समूहों के सदस्यों के प्रति सबसे अच्छी तरह से आदर भाव प्रकट करते हैं' (पृ. 603) । ऐसे मामलों में सामूहिक सांस्कृतिक अधिकारों (जिनमें शैक्षिक अधिकार भी शामिल हैं) के संबंध में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए ।

उदार तथा बहुलवादी जनतांत्रिक व्यवस्थाओं को ऐसे अनुदार समुदायों से कैसा व्यवहार करना चाहिए ? क्या उनके प्रति आखिरी सीमा तक सहिष्णु रहकर उन्हें सांस्कृतिक अधिकार, जिनमें शैक्षिक अधिकार भी शामिल हैं, दिये ही जाने चाहिए अथवा व्यक्ति के अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं की रक्षा और उदार एवं बहुलवादी जनतांत्रिक व्यवस्था की निरन्तरता बनाये रखने के लिए, उनके प्रति सीमित सहिष्णुता रख कर सांस्कृतिक अधिकारों पर कुछ रोक लगा देनी चाहिए ?

टोमासी का मत तर्क की दृष्टि से सिर्फ इसलिए अमान्य नहीं है कि वे नागरिक-व्यवस्था से संबंधित खतरों पर ध्यान नहीं देते हैं। सबसे बड़ी समस्या यह है कि कोई समूह सामूहिक-सांस्कृतिक-अधिकारों का पात्र है या नहीं, और क्या वह समूह व्यक्ति के अधिकारों की कीमत पर तो पात्र नहीं बन रहा है, इसका निर्णय कैसे किया जाये ? टोमासी की राय में यह बहुत सरल मसला है, यह मसला समूह द्वारा स्वयं की ऐसी व्याख्या भर का है । यदि कोई समुदाय सामूहिक-अधिकारों की मांग करता है तो उसे ऐसे अधिकारों का पात्र माना जाना चाहिए । 'सामूहिक उपायों की मांग ही समूह की इस रूप में व्याख्या करती है कि उसके बहुमत या नेतृत्व के पास, उसके व्यक्ति-सदस्यों द्वारा चुनी गई जीवन-योजनाओं के आधार-भूत तत्वों का मूल्यांकन करने या उन्हें निरस्त करने की सत्ता है । अत: एक समूह जिसका बड़ा बहुमत समूह के भीतर स्वतंत्रता को सीमित करने वाले उपायों की उपयुक्तता पर बल देता है, वह समूह स्वयं को अनुदार-समूह माने जाने पर बल देता प्रतीत होता है' (पृ. 600-01) ।

तर्क की इस पद्धति पर मेरी आपत्ति यह है कि समूह स्वयं कभी विचार प्रकट नहीं करता है, बल्कि उसके प्रतिनिधि विचार प्रकट करते हैं और यह हमेशा अनिश्चित रहता है कि वे (प्रतिनिधि) किसका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं । जब नेता, प्रतिनिधि या सदस्यों का बहुमत (वह बहुमत कितना भी बड़ा हो) यह घोषित करता है कि समूह के सदस्य कुछ विशेष व्यक्ति-अधिकारों को महत्व नहीं देते हैं तो इसका अर्थ, आवश्यक रूप से, यह नहीं होता है कि एक भी सदस्य उन व्यक्ति अधिकारों को मूल्यवान नहीं मानता है। यदि ऐसे सदस्य हैं (चाहे वे थोड़े ही हों) जो व्यक्ति-अधिकारों को बनाये रखना चाहते हैं तो जनतंत्रीय-राज्य नेताओं, प्रतिनिधियों या बहुमत की इच्छाओं को मान्य नहीं कर सकता । मैं सोचता हूं तोमासी भी (अपने तर्क के आधार पर ही) ऐसा नहीं करेंगे । क्योंकि यह, साफ तौर पर, ऐसे समूह का मत नहीं है, जिसके सभी सदस्य उदारता

4. इस अनुच्छेद में सारे पृष्ठ संदर्भ टोमासी के इसी लेख से हैं ।

संबंधी खतरों को अमान्य करते हैं और जिनके लिए सांस्कृतिक-संरक्षा की तुलना में कुछ व्यक्ति-अधिकार कम महत्वपूर्ण हैं । अधिक से अधिक मत का संबंध एक उपसमूह, नेतृत्व-वर्ग, प्रतिनिधि या बहुमत से होगा । वांछित सामूहिक-अधिकार तब इस उपसमूह को ही दिये जाने चाहिए और वे इस उपसमूह की सीमाओं के भीतर ही लागू होंगे । कोई विशेष व्यक्ति ऐसे उपसमूह का सदस्य है या नहीं, यह तभी स्पष्ट होगा जब वह व्यक्ति स्वेच्छा से, साफतौर से और व्यक्तिगत रूप में (उस उप समूह से) अपनी सहमति प्रकट करेगा । अन्य किसी तरह से यह कैसे निश्चित किया जा सकता है कि कोई व्यक्ति 'वैसे व्यक्ति-अधिकारों के, जो उदार समाजों में महत्वपूर्ण माने जाते हैं, धारक के रूप में स्वयं को मानने की चिन्ता नहीं करता है या स्वयं को ऐसा धारक नहीं समझता है' ।

जब इस दृष्टि से विचार किया जाता है और वैकल्पिक तर्क के शुरुआती बिन्दु के रूप में इसका प्रयोग किया जाता है तो अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक अधिकारों की न्यायसंगतता का मसला उस परिप्रेक्ष्य की ओर मुड़ जाता है जिसमें इन अधिकारों को संघ बनाने के व्यक्ति-अधिकार से व्युत्पन्न समझा जाता है । कूकाथस तर्क की इस पद्धति के प्रसिद्ध प्रतिपादक हैं । किन्तु, इस अभिगम की परीक्षा से पहले मैं टोमासी के सुझाव पर कुछ और आलोचनात्मक टिप्पणी करना चाहूंगा ।

समूह के नाम पर सामूहिक अधिकारों की मांग करने वाले और 'संपूर्णत: समूह' के बीच संबंधों को लेकर ही समस्या उत्पन्न नहीं होती है, समूह और उसके बालकों के बीच संबंध की बात भी समस्याग्रस्त है । टोमासी जिस तरह सामान्य तौर से सामूहिक अधिकारों की वकालत करते हैं, उस तरह से किसी सांस्कृतिक अल्पसंख्यक-समूह की शैक्षिक-सत्ता की मांग को न्याय संगत नहीं ठहराया जा सकता । जब कोई समूह सामूहिक-सांस्कृतिक-अधिकारों की मांग करता है और उसे ऐसे अधिकार प्रदान भी कर दिये जाते हैं तो यह मान लिया जाता है कि समूह के बालकों को, एक अथवा दूसरे तरीके से, समूह का अंग ही माना जाना चाहिए। ऐसा मानना ठीक नहीं है । हम कभी-कभी एक सांस्कृतिक परंपरा, जिसमें कोई जन्म लेता है [5], की बात करते हैं, किन्तु बालक किसी सांकृतिक-समुदाय के सदस्य के रूप में जन्म नहीं लेते हैं । वे समूह के सदस्यों और उनकी संस्कृति के मध्य जन्म लेते हैं । नवजात किसी संस्कृति के धारक नहीं होते, समाजीकरण और शिक्षा के माध्यम से ही बालक धीरे-धीरे ऐसे धारक और सांस्कृतिक समुदाय के सदस्य बनते हैं । अत: वे किसी विशेष संस्कृति के धारक और किसी विशेष सांस्कृतिक समुदाय के सदस्य बनते हैं या नहीं , यह आंशिक रूप से शिक्षा का परिणाम होता है । बालकों को किस तरह की शिक्षा मिलनी चाहिए, यही बात शैक्षिक-अधिकारों के विभाजन से संबंधित विवादों को लेकर चलने वाली बहस का केन्द्र बिन्दु है। इस कारण बालकों को, सामान्य रूप से, किसी विशेष सामूहिक समुदाय का अंग मान लेना गलत और अतार्किक है; खासतौर से तब और भी, जब उस समुदाय को, व्यक्ति अधिकारों की रक्षा की कीमत पर, सामूहिक अधिकार प्रदान किये जाते हों । सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों की शैक्षिक-सत्ता को किसी प्रत्याशित सांस्कृतिक सदस्यता के आधार पर मान्यता देना अनुचित है जबकि ऐसी प्रत्याशा स्वयं शैक्षिक-सत्ता के आवंटन पर निर्भर है ।

जो इसका खंडन यह तर्क देकर करना चाहते हैं कि 'एक सांस्कृतिक समूह से संबंध रखने वाले बालक सामान्य रूप से उस समूह की विशेष संस्कृति के धारक हो जाते हैं और इसलिए उन्हें, एक अर्थ में, समूह का सदस्य ही माना जाना चाहिए;' वे समाजीकरण और शिक्षा की भूमिका को कम करके आंकते हैं । यही नहीं, वे शैक्षिक-सत्ता के अधिकार की मांग के तर्काधार को भी ठीक तरह से नहीं समझते हैं । अपनी सांस्कृतिक पहचान की रक्षा का प्रयत्न करने वाले सांस्कृतिक अल्पसंख्यक समूह शैक्षिक-अधिकारों की मांग प्राय: अच्छे उद्देश्यों के लिए करते हैं । समुदाय की शैक्षिक-सत्ता जितनी व्यापक और जितनी अधिक अनन्य होगी, यह सुनिश्चित करने की संभावना भी उतनी ही अधिक होगी कि समूह के बालक, वास्तव में ही, उस विशेष समूह-संस्कृति के धारक बन जायें।

अन्त में, इस विवेचन के बाद भी, कुछ लोग यह सुझाव देना चाहेंगे कि कुछ संस्कृतियों में मनुष्य सहज रूप से यह विश्वास करते हैं कि उनके बालकों का अपने सांस्कृतिक समुदाय से जुड़ाव पूर्व-निश्चित है तथा जन्म के समय या इससे पूर्व भी वे, एक विशेष अर्थ में, अपने सांस्कृतिक समूह के अंग होते हैं और राज्य एवं बाहरी व्यक्तियों द्वारा ऐसा ही माना जाना चाहिए । ये लोग, शायद अप्रत्यक्ष रूप से, ऐसे सिद्धान्त का समर्थन कर रहे हैं, जो जनतंत्र में मान्य नहीं हो सकता। वे इस पूर्व-धारणा से बात शुरू करते हैं कि यदि संस्कृति तथा रक्त बंधनों के रिश्तों के बारे में निजी मिथक ऐसा निर्धारित करते हैं तो सरकार को वैयक्तिक-अधिकारों की रक्षा का काम बंद कर देना चाहिए, चाहे ऐसे मिथकों को उन सभी व्यक्तियों द्वारा, सामान्य रूप से, स्वीकार नहीं किया जाता हो, जिनके वैयक्तिक अधिकारों को हाशिए पर डाल दिये जाने का खतरा हो । अजन्मे और नवजात बालक ऐसे मिथकों के बारे में कुछ नहीं जानते और आगे चलकर वे इन मिथकों पर विश्वास करेंगे या नहीं, यह आंशिक रूप से, समाजीकरण तथाा शिक्षा पर निर्भर है[6]।

5. देखिए, उदाहरण के लिए, स्टोल्जेनबर्ग, 1993, पृ. 609

6. लेकिन कल्पना करें ; एक सांस्कृतिक समुदाय में मनुष्य यह विश्वास करते हैं कि यह समाजीकरण और शिक्षा पर निर्भर नहीं है । तब क्या होगा ? पहले, यह बहुत विचित्र होगा कि वे शैक्षिक सत्ता की मांग करें । उन्हें इससे क्या लाभ होगा? दूसरे , यह विश्वास, उन विश्वासों में से एक होगा जिन्हें सभी ऐसे व्यक्ति नहीं मानते हैं जिनके वैयक्तिक अधिकारों को समझौतों के द्वारा तब खतरा होगा, जब वे, सरकार के लिए, कुछ क्षेत्रों में तथा एक विशेष अर्थ में वैयक्तिक अधिकारों की संरक्षा को त्यागने के कारण सिद्ध होंगे ।

कूकाथस : स्वैच्छिक संगठन

टोमासी, स्पष्ट तौर से सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों को सामूहिक अधिकारों के रूप में देखते हैं । इस दृष्टि की असफलता को बता दिया गया है । कूकाथस (1992 ए और बी)[7] वान डाइक के, जो सत्तर के दशक के मध्य अल्पसंख्यकों के अधिकारों को सामूहिक अधिकारों के रूप में स्वीकार किये जाने की वकालत कर रहे हैं[8], कार्य पर अपनी प्रतिक्रिया में इसी तरह की आलोचना प्रस्तुत करते हैं। कूकाथस इससे इंकार नहीं करते कि 'अल्पसख्यक-समुदायों के सांस्कृतिक स्वास्थ्य' के लिए चिन्ता करना न्यायोचित है' (पृ. 107) और वे सांस्कृतिक समुदायों द्वारा अपनी सास्कृतिक पहचान की रक्षा के प्रयत्नों की जरूरत को भी पूरी तरह समझते हैं । यही नहीं, वे विश्वास भी करते हैं कि जनतांत्रिक राज्य को इन मसलों में उदासीनता का रुख नहीं अपनाना चाहिए । किन्तु, वे इस निष्कर्ष का विरोध करते हैं कि अल्पसंख्यकों को इसीलिए सामूहिक-अधिकार दिया जाना आवश्यक है ।

सामूहिक-अधिकार दुर्लंध्य समस्याएं प्रस्तुत करते हैं । कूकाथस के अनुसार सबसे गंभीर समस्या यह है कि 'समूहों का अस्तित्व निश्चित तथा अपविर्तनीय नहीं है' (पृ. 110) और 'अधिकांश समूह किसी निश्चित समय पर समरूपी नहीं होते हैं' (पृ. 113) । समूहों की बनावट, प्रकृति और सीमांकन प्राय: बाहरी प्रभावों से (जैसे राजनैतिक प्रभाव) परिवर्तनीय हो सकते हैं। इससे समूह की एकरूप इकाइयों के रूप में, (संभावित अधिकार-धारक तथा सुस्पष्ट इकाई की तो बात ही छोड़िए) व्याख्या करना बहुत कठिन हो जाता है । यही नहीं कि ऐसे समूहों में प्राय: एकरूपता का अभाव होता है, 'उनमें महत्वपूर्ण मतभेद तथा हितों के टकराव भी हो सकते हैं ।' (पृ. 113) । अन्य चीजों के साथ कूकाथस समूहों के भीतर अभिजन तथा साधारण जनों के बीच संभव विवादों का उल्लेख करते हैं जो 'सांस्कृतिक अखंडता की रक्षा करने की वांछनीयता पर मतभेदों की संभावना की ओर संकेत करते हैं (पृ. 114)' । आन्तरिक संघर्षों की संभावना उदार जनतांत्रिक राज्य को बहुत सावधान रहने को प्रेरित करती है । जब 'संपूर्ण सांस्कृतिक समुदाय (जैसा कि उसके भीतर के अभिजन समझते हैं) और उसके व्यक्ति सदस्यों के समूहों के हितों के बीच टकराव हो सकता है' तो राज्य उनके विचारों को प्राथमिकता नहीं दे सकता जो संपूर्ण सांस्कृतिक समुदाय के हित में बोलने का दावा करते हैं, चाहे वे बहुमत में ही हों, क्योंकि अल्पमत के हितों की उपेक्षा करना उचित नहीं है' (पृ. 115)।

यह कहना कि सामूहिक अधिकार उचित नहीं है, कोई अनर्थ नहीं है । हम उनके बिना रह सकते हैं । कूकाथस यह प्रस्ताव करते हैं कि हम अल्पसंख्यकों के अधिकारों को व्यक्ति-अधिकारों के रूप में समझें और इसी रूप में उनका समर्थन करें । हम सांस्कृतिक समुदायों को 'स्वैच्छिक संगठनों' के रूप में देख सकते हैं; अन्य शब्दों में 'ऐसे व्यक्तियों के संघ' जिनकी अपने सम्प्रदाय के रिवाजों के अनुसार जीवन-यापन करने की स्वतंत्रता आधारभूत महत्व की है और उसे सभी स्वीकार करते हैं । सांस्कृतिक समुदाय उसी हद तक स्वैच्छिक संगठन हैं 'जहां तक सदस्य साथ रहने की शर्तों को और उन्हें बनाये रखने वाली सत्ता को वैधानिक मानते हैं' । यह कहां तक लागू होता है, इसे निश्चित करना सरल है । 'ऐसी मान्यता के प्रमाण के लिए सिर्फ यह तथ्य काफी है कि सदस्य संघ को छोड़ना पसन्द नहीं करते हैं' (पृ. 116) । अत: एक सांस्कृतिक समुदाय उस सीमा तक स्वैच्छिक संगठन है, जहां तक उसके सदस्यों को उसे त्यागने की स्वतंत्रता है। कूकाथस के अनुसार अल्पमत भी काफी बड़ी सत्ता का पात्र है' (पृ. 117) । 'त्यागने की स्वतंत्रता' का अधिाकर ही एक मात्र ऐसा व्यक्ति-अधिकार है जिसकी रक्षा सार्वजनिक रूप से अवश्य करनी चाहिए । उनका एक निष्कर्ष यह है कि चरम शैक्षिक-सत्ता की अनुमति नहीं देनी चाहिए। 'बड़े समाज को यह अधिकार नहीं है कि सांस्कृतिक समूह के भीतर वह शिक्षा के किसी विशेष स्तर या पद्धति की मांग करे या उनके विद्यालयों को प्रभुत्वशालियों की संस्कृति को प्रोत्साहित करने के लिए विवश करे' (पृ. 117, 126)।

क्या वास्तव में सांस्कृतिक-अल्पसंख्यकों के अधिकारों को उदारवाद के खतरों के बिना, प्रतीयमान सामूहिक अधिकारों के रूप में न्यायसंगत सिद्ध किया जा सकता है ? और क्या इसका अर्थ यह होता है कि सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों की शैक्षिक-सत्ता के बारे में उठायी जाने वाली आपत्तियां, अनुदार सांस्कृतिक समुदायों के व्यापक शैक्षिक अधिकारों के प्रति उठायी जाने वाली आपत्तियां भी, दूर हो गईं हैं ? जैसा कि कूकाथस स्पष्टता से और बल देकर कहते हैं (पृ. 126) ? शायद कूकाथस का अभिगम सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के कुछ अधिकारों की न्यायसंगति को सरल बनाता है - सुविधा के लिए मैं उन्हें संदेह का लाभ दूंगा । किन्तु, अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अधिकारों को निश्चय ही इस तरीके से न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता ।

अपनी दलील शुरू करते समय कूकाथस नागरिक-व्यवस्था संबंधी खतरों की उपेक्षा करते हैं । किन्तु, वे कठिनाई से ही यह मान सकते हैं कि नागरिक-व्यवस्था संबंधी खतरे महत्वपूर्ण नहीं हैं। उनके अनुसार 'त्यागने की स्वतंत्रता' सांस्कृतिक-समुदायों से उदारता

7. इस अनुच्छेद में सभी पृष्ठ संदर्भ इन्हीं आलेखों से हैं ।
8. संदर्भ देखे कैम्लिक्का, 1989; गालेन काम्प, 1993; वानडिके, 1974, 1977,1980,1982 ।

एवं खुलेपन के संदर्भ में, मुश्किल से ही, कोई मांग करती है, किन्तु यह जरूर चाहती है कि 'बड़ा समाज स्वयं ऐसा होना चाहिए जिसका वर्णन उदार राजनैतिक संस्कृति वाले समाज के रूप में किया जा सके (पृ. 134)' । जब अपने स्वयं के बालकों की शिक्षा पूरी तरह किसी समूह विशेष के, जिसमें अनुदार सांस्कृतिक समुदाय भी शामिल हैं, हाथों में छोड़ दी जाती है (कूकाथस ऐसा करना विधि सम्मत मानते हैं) तो संपूर्ण समाज की उदार राजनैतिक संस्कृति दबाब में आ जाती है (वही, अनुच्छेद 1) । शैक्षिक सत्ता के ऐसे अविवेकी विभाजन से ऐसी स्थितियां उत्पन्न होने का खतरा बढ़ जाता है, जिनमें अल्पसंख्यकों को शैक्षिक अधिकार प्रदान करना न्याय संगत या बुद्धिमानी का काम नहीं रह जायेगा । कूकाथस नागरिक व्यवस्था संबंधी खतरों को विचारणीय नहीं मानते हैं, यह तथ्य उनके अभिगम को विरोधाभासपूर्ण बना देता है।

कूकाथस के विचारों में एक बड़ा संरचनात्मक दोष स्वैच्छिक और त्यागने की स्वतंत्रता की शर्तों की उनकी व्याख्या के कारण आ जाता है । वे दलील देते हैं कि यदि सांस्कृतिक सदस्यता स्वैच्छिक है (स्वैच्छिकता का प्रमाण त्यागने की स्वतंत्रता होने पर भी समुदाय को नहीं छोड़ना है) तो सांस्कृतिक समुदाय अल्पसंख्यक-अधिकारों का पात्र हो जाता है । तब एक स्पष्ट प्रश्न यह उठेगा कि क्या अनुदार सांस्कृतिक समुदायों को स्वैच्छिक-संघ के रूप में स्वीकार किया जा सकता है ? इसका उत्तर बहुत आसान है । पर्याप्त शिक्षा तथा खुलेपन का सांस्कृतिक संदर्भ सदस्यता की स्वैच्छिकता एवं त्यागने की स्वतंत्रता की पूर्व शर्त हैं और अनुदार सांस्कृतिक समुदाय इसे पूरा नहीं करते हैं । यह उन्हें अल्पसंख्यकों के अधिकारों के अयोग्य बना देता है ।

यदि, ऐसी शिक्षा का अभाव हो जो ज्ञान एवं आलोचनात्म चिंतन का विकास करती हो; स्पष्ट एवं रूद्ध विश्वासों का प्रश्न-वंचित वातावरण हो; तो ऐसी स्थिति में किसी खास जीवन शैली की अनुपालना को स्वतंत्र-वरण की स्थिति कहना मुश्किल ही होगा । इसे लाभप्रद, सार्थक एवं सुगम विकल्पों के अभाव में अज्ञान तथा आदत के दबाव का मामला मानना ज्यादा ठीक होगा।[9] अत: स्वैच्छिकता एवं त्यागने की शर्तों का अर्थ यह निकलता है कि सांस्कृतिक-समुदाय सांस्कृतिक-अधिकारों के पात्र तब तक नहीं हो सकते जब तक कि उनकी शिक्षा-व्यवस्था कुछ शैक्षिक जरूरतों को पूरी नहीं करती हो और उनका वैचारिक एवं नैतिक वातावरण पर्याप्त उदार नहीं हो । शैक्षिक-सत्ता के विभाजन के मामले में इस पर अवश्य विचार करना चाहिए । अनुदार समुदायों के दावों को स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

कूकाथस ऐसी समालोचना के प्रति संवेदनशील नहीं है । उनकी स्वतंत्रता की अवधारणा बहुत ढीली है और स्वैच्छिकता तथा त्यागने की स्वतंत्रता की अवधारणाएं पूरी तरह सतही हैं । जब कोई समूह विशेष मूल्यों एवं सचाइयों के अनुसार आचरण करता है और एक विशेष प्रकार की जीवन शैली को ही, सहजरूप में, अपनाता है तो स्वैच्छिकता की शर्तें पूरी नहीं होती हैं । यह महत्वपूर्ण नहीं है कि वह ऐसा किस तरह करता है; बिना सोच-विचार के जल्दबाजी में करता है या चिन्तनशीलता के साथ करता है, आत्म-समर्पण के भाव से करता है या सचेतन वरण के रूप में करता है। पृ. 124-125, 677-78) । इसी तरह उनकी त्यागने की स्वतंत्रता भी खोखली है । उनके अनुसार 'जब वृहद समाज ..... अपने स्थानीय समूह को त्यागने की इच्छा रखने वाले व्यक्तियों के प्रति खुला होता है और उसमें उदार राजनैतिक संस्कृति निहित होती है तो उस समुदाय में 'त्यागने की वास्तविक स्वतंत्रता' मौजूद रहती है (पृ. 133 - 34) । इस व्याख्या में स्वतंत्रता की जो छिछली अवधारणा है, वह कूकाथस के अभिगम को विवेचनात्मक एवं ज्ञानयुक्त स्वायत्तता के सकारात्मक मूल्यांकन पर आधारित किसी आलोचना से मुक्त कर देती है । कम से कम ऐसा प्रतीत होता है । पुन: परीक्षा में इसमें एक और कमजोर बिन्दु दिखाई देता है ।

कैसे भी अनुदार-सांस्कृतिक-समुदाय हों, यदि वे सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों के पात्र बनने की इच्छा रखते हैं तो वे समूह के प्रति निष्ठा की बाध्यता बनाये रखने के लिए कुछ भी करने को स्वतंत्र नहीं हैं । ऐसा पात्र बनने के लिए उन्हें 'दासता' भौतिक अवपीड़न तथा क्रूर, अमानवीय व अपमानजनक व्यवहार' करने की अनुमति भी नहीं होगी (पृ. 128) । कूकाथस समूह के प्रति निष्ठा रखने की बाध्यता के सभी रूपों की आलोचना क्यों नहीं करते हैं? समूह के प्रति निष्ठा की बाध्यता अनिवार्य सहानुभूति व सहमति और त्यागने की अस्वतंत्रता को जन्म देती है । वे स्वयं मानते हैं कि अवपीड़न के किसी भी रूप को सहन नहीं किया जाना चाहिए। यह बात उनके इस कथन से निकलती है कि संघ बनाने की स्वतंत्रता में यह भी शामिल है कि 'किसी को भी एक विशेष जीवन-शैली स्वीकार करने के लिए आदेश नहीं दिया जा सकता' (पृ. 125-26) ।

बाध्यकारी सांस्कृतिक सदस्यता को मुश्किल से ही स्वतंत्र-सदस्यता माना जा सकता है । इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि बाध्यता भौतिक थी या मनोवैज्ञानिक और कितनी मानवीय थी या अमानवीय । अवपीड़न पराधीनता को जन्म देता है । अत: यह महत्वपूर्ण है कि किसी व्यक्ति ने किसी विशेष जीवन-शैली को किस तरह से ग्रहण किया है और किन्हीं विशेष मूल्यों तथा सचाइयों से कैसे सहमत हुआ है । स्वतंत्रता की अनैतिहासिक और अबध

9. यह कूकाथस की कैम्लिक्का द्वारा आलोचना के समान है । (कैमिलक्का, 1992 पृ. 145)

अवधारणा, जिसका कूकाथस समर्थन करते हैं., स्पष्ट रूप से अनुचित है । बालकों का पालन-पोषण कैसे होता है यह प्रासांगिक है। यदि विकास और सीखने पर रोक लगायी जाती है या उन्हें किसी विशेष दिशा में बाध्य किया जाता है, यदि उनकी गतिविधियो में वृद्धि को तथा चिन्तन करने एवं समस्याओं का सामना करने की योग्यता को कुंठित किया जाता है, यदि योग्यता के अर्जन, विकास और परिपक्वन में बाधा डाली जाती है, यदि ज्ञानात्मक सामर्थ्य को सीमित किया जाता है और संकीर्णता एवं अदूरदर्शिता को बढ़ावा दिया जाता है, यदि बालकों पर विशेष गुणों तथा नियमों को थोपकर उन्हें व्यवस्थित तरीकों से नैतिक रूप से स्तंभित किया जाता है; संक्षेप में जब बालकों को समुचित तरह से शिक्षित नहीं किया जाता है, या शिक्षित ही नहीं किया जाता है तो उन्हें सांस्कृतिक निष्ठा, सहानुभूति, सहमति, अनिवार्य सदस्यता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया जा रहा होता है और इसे स्वाधीनता के साथ साहचर्य तो क्या स्वतंत्र समनुमति भी नहीं कहा जा सकता।

स्वैच्छिकता और त्यागने की स्वतंत्रता की स्थितियों के लिए पर्याप्त शिक्षा तथा खुलेपन का सांस्कृतिक संदर्भ जरूरी है । यह कूकाथस के परिप्रेक्ष्य के कुछ पूर्वानुमानों से मेल खाता है । इस तथ्य से मुश्किल से ही इंकार किया जा सकता है कि सांस्कृतिक समुदाय सांस्कृतिक-अधिकारों के पात्र तभी बन सकते हैं जब उनकी शिक्षा-व्यवस्था कुछ शिक्षा-शास्त्रीय जरूरतों को पूरा करती हो और उनका वैचारिक एवं नैतिक वातावरण पर्याप्त रूप से उदार हो । अन्यथा निम्न निष्कर्षों को निरस्त नहीं किया जा सकता : शैक्षिक सत्ता का विभाजन करते समय जब इस बात पर गंभीरता से विचार किया जाता है तो अनुदार समुदायों को उस मात्रा में शैक्षिक सत्ता मिलने के अवसर कम ही होंगे, कुछ समूह जिसकी मांग (कूकाथस के अनुसार उचित ही) अपने लिए करते हैं ।

कूकाथस के प्रस्ताव पर अन्तिम आलोचनात्मक टिप्पणी बालकों की स्थिति से संबंध रखती है । टोमासी जैसों के अभिगमों में बालक निर्विवाद रूप से उस समूह एवं संस्कृति के अंग मान लिये जाते हैं, जिसके सदस्यों एवं धारकों के बीच वे जन्म लेते हैं । कूकाथस भी बच्चों को पूरी तरह को उनके माता-पिताओं पर छोड़ देने के बारे में मौन हैं और इस बारे में कोई सवाल नहीं उठाते हैं। वे माता-पिताओं की समूह का सदस्य होने की वैयक्तिक स्वतंत्रता से माता-पिताओं के अतिशय अधिकारों एवं उनकी लगभग अनन्य सत्ता का निष्कर्ष तत्काल निकाल लेते हैं। (पृ. 126) वे अपनी बात का समापन इस निष्कर्ष के साथ करते हैं कि उनकी (उदाहरण के लिए जैसे एमिश और जिप्सियों) शिक्षा में कोई भी बाहरी व्यक्ति हस्तक्षेप नहीं कर सकता है । माता-पिताओं के साथ बालकों का यह नैतिक एवं कानूनी तादात्म्य क्यों जरूरी है ?

'त्यागने की स्वतंत्रता' की रक्षा के लिए उदार जनतांत्रिक राज्य को 'ज्ञान की स्थितियों', 'सामर्थ्य की स्थितियों', 'मनोवैज्ञानिक स्थितियों' और 'उपयुक्तता की स्थितियों' की निगरानी अवश्य करनी चाहिए । हरेक को अपनी जीवन-शैली से भिन्न जीवन-शैली का ज्ञान अवश्य होना चाहिए, (ज्ञान), हरेक को अपनी जीवन-शैली से भिन्न जीवन-शैली का मूल्यांकन करने में समर्थ अवश्य होना चाहिए (सामर्थ्य), हरेक को मत-आरोपण एवं दबाब डालने के अन्य अभौतिक रूपों से अवश्य मुक्त होना चाहिए । (मनोवैज्ञानिक) और हरेक को अपनी जीवन-शैली से भिन्न जीवन-शैली को (कम से कम कुछ को) निष्पादित करने की योग्यता एवं ज्ञान अवश्य होना चाहिए (उपयुक्तता) ।

बालकों की विशेष (अर्थात असमान) स्थिति के बारे में प्रचलित तर्क संगति उनकी अपर्याप्त स्वायत्तता एवं तार्किक योग्यता की कमी को और निष्कर्ष रूप में प्रौढ़-संरक्षकता पर उनकी निर्भरता को आधार बनाती है ।[10] इस कारण, इस दलील के अनुसार, उन्हें कानूनी एवं नैतिक रूप से स्वतंत्र नहीं माना जा सकता और उनसे इस रूप में व्यवहार नहीं किया जा सकता । इस पिष्टोक्ति (क्लीशे) के बाबजूद, दलील की यह पद्धति इसे जरूरी नहीं मानती कि बालक के लिए उत्तरदायी प्रौढ़, उसके माता-पिता, स्वाभाविक माता-पिता या उनके रक्त संबंधी या माता-पिताओं के सांस्कृतिक संबंधी ही होंगे । इस दलील में यह निहित है कि संरक्षक सिर्फ संबंधी ही नहीं, कोई भी प्रौढ़ हो सकता है । यह निष्कर्ष कूकाथस के लिए गंभीर समस्या उत्पन्न कर देता है ।[11]

किन्तु एक समस्या और है, जो इससे भी अधिक महत्व की है । बालकों की अपने माता-पिताओं के साथ नैतिक एवं कानूनी तादात्मयता की तर्क संगति के पक्ष में अति प्रचलित दलील (बालकों में स्वायत्तता एवं तार्किकता की कमी) कूकाथस के दृष्टिकोण को समायोजित करने में असफल रहती है । उनके अनुसार, जैसा कि पहले स्पष्ट हो गया है, न तो स्वायत्तता और न तार्किकता ही नैतिक

10. वानडेर प्लोग, 1995, पृ. 299-300 ।
11. इस मुद्दे से संबंधित अनेक सिद्धांतों तथा तर्कों की आलोचनात्मक समीक्षा के लिए देखिए, वानडेर प्लोयग, 1995, पृ. 251-265 ।

एवं कानूनी स्वतंत्रता की पूर्व शर्त है। यदि स्वायत्तता एवं तार्किकता का अभाव बालकों तथा उनके लिए उत्तरदायी प्रौढ़ों के साथ उनकी नैतिक व कानूनी तादात्मयता का तर्काधार नहीं है तो फिर यह तर्काधार और क्या है ? कूकाथस इसका उत्तर नहीं दे पाते । वे इस समस्या पर ध्यान भी नहीं देते हैं, जो खेद की बात है । यह कोई काल्पनिक मुद्दा नहीं है, व्यावहारिक मुद्दा है । यह कितनी ठोस समस्या है, एक साधारण उदाहरण से इसे समझा जा सकता है । यह कल्पना करें : एमिश बालक अपने माता-पिताओं की इच्छा का विरोध करते हुए, सोलह वर्ष की आयु तक, सार्वजनिक शिक्षा पाने की आकांक्षा प्रकट करते हैं अथवा मूलतत्ववादी ईसाइयों के बालक अपने माता-पिताओं का विरोध करते हुए नियमित पठन-कार्यक्रम में भाग लेने की इच्छा अभिव्यक्त करते हैं ।[12] आयु के अन्तर के बाबजूद इन बालकों को उनके माता पिताओं के समान मानने और फलस्वरूप उनके त्यागने की स्वतंत्रता का (कुछ हद तक) सम्मान करने तथा अपनी संस्कृति के नियमों (संदर्भित मुद्दों से संबंधित) का अनुसरण कराने के लिए बालकों का अवपीड़न करने से माता-पिताओं को रोकने से जनतांत्रिक राज्य को कैसे रोका जा सकता है ? क्या वास्तव में माता-पिता पूर्ण स्वतंत्रता के पात्र हैं या बालक पर्याप्त संरक्षा के पात्र हैं ?

इससे भी ऊपर, मान लें कि एमिश या मूलतत्ववादी ईसाई राजकीय शिक्षा के बारे में शिकायत करते हैं; जबकि उनके बालक स्वयं या अपनी पहल पर राजकीय विद्यालयों अथवा नियमित पठन-कार्यक्रमों के बारे में विरोध प्रकट नहीं करते हैं, बल्कि उनमें प्रवेश लेते हैं । जहां तक बालकों का संबंध है (कूकाथस की तर्क-पद्धति का अनुसरण करते हुए), कम से कम, यह उनकी स्वतंत्र समनुमति का मामला है । क्या जनतांत्रिक राज्य को बालकों की मूक सहमति एवं समनुमति का सम्मान करना चाहिए ? क्या राज्य को माता-पिताओं की शिकायतों और मांगों को बाहरी व्यक्तियों का शोरगुल मानकर हाशिए पर डाल देना चाहिए ? यदि कूकाथस तर्क संगत रहना चाहते हैं तो उन्हें इसका उत्तर 'हां' में देना पड़ेगा। हम बालकों की भागीदारी की व्याख्या, संरक्षा के योग्य, उनके स्वतंत्र निर्णय के रूप में क्यों नहीं करें ? कूकाथस के अनुसार न तो स्वायत्तता और न तार्किकता ही स्वैच्छिकता की शर्त है; समनुमति ही पर्याप्त है । जब तक बालकों एवं प्रौढ़ों के बीच असमानता, आधारभूत रूप से, वैसी ही नहीं है जैसी असमानता पर्याप्त और अपर्याप्त स्वयत्तता व तार्किकता के बीच होती है, प्रौढों की समनुमति को बालकों की समनुमति से, आधारभूत रूप से भिन्न महत्व नहीं दिया जा सकता । अत: जब तक कूकाथस इस बारे में (कि प्रौढ़ों की तुलना में बालकों की कानूनी एवं समाज में स्थितिपरक हैसियत मौलिक रूप से भिन्न है) प्रचलित तर्क से हटकर कोई विकल्प नहीं देते हैं, उनकी दलील इस मत से कि राज्य को ऐसे माता-पिताओं के (जिनके बालक स्वयं अथवा अपनी पहल पर विरोध नहीं करते हैं) सार्वजनिक शिक्षा के विरुद्ध विरोध का आदर करना चाहिए, असंगत रहेगी । यह उनके इस मत के भी विरोध में है कि माता-पिताओं की राय प्रासांगिक होती है ।

12. संदर्भ, योडेर और मोजर्ट मामले ।

गाल्स्टन : विविधतापूर्ण राज्य

सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों को यथेष्ट शैक्षिक-सत्ता देने की गाल्स्टन की तर्क संगति कूकाथस के अभिगम से बहुत बेहतर है (1995)[13]। कुछ मामलों में गाल्स्टन का तर्क कूकाथस के समान है : सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के अधिकार 'संघ बनाने की स्वतंत्रता' की शर्तों पर न्यायसंगत हैं और वे उदार अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षित नहीं है । गाल्स्टन की दलील बेहतर हैं क्योंकि 'त्यागने की स्वतंत्रता' की उनकी अवधारणा कम सतही है और वे नागरिक-व्यवस्था संबंधी खतरों को भी गंभीरता से लेते हैं ।

गाल्स्टन विविधता की चिन्ता को प्रथम प्राथमिकता देते हैं। उदार जनतंत्र को सबसे पहले, वरण की स्वतंत्रता एवं स्वायत्तता को प्रोत्साहन और उनकी निगरानी की तुलना में विविधता की रक्षा के लिए प्रयत्न करना चाहिए । इसे रेखांकित करने के लिए गाल्स्टन इसको 'विविधतापूर्ण राज्य' का नाम देते हैं । यह एक ऐसा राजनैतिक आदर्श है 'जो व्यक्ति एवं समूह के बीच अन्तर के लिए अधिकतम संभव स्थान प्रदान करता है' इस स्थान की सीमा केवल उदार सामाजिक एकता से तय होती है । (पृ. 524) । ऐसे जनतंत्र में सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों को व्यापक शैक्षिक-अधिकार प्राप्त होते हैं (पृ. 516) गाल्स्टन उदारता एवं नागरिक -व्यवस्था संबंधी खतरों सेपरिचित हैं (पृ. 517-18), फिर भी वे विश्वास करते हैं कि विविधता से न तो व्यक्ति-स्वतंत्रता एवं अधिकारों को और न ही नागरिक एकता एवं स्थिरता को गंभीर हानि होगी ।

यदि सभी समूह उदार नहीं हैं तो समूह की विविधता और व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं अधिकार साथ-साथ कैसे रह सकते हैं ? पहली नजर में गाल्सटन का उत्तर कूकाथस के समान है : 'राज्य को व्यक्तियों के सीमाओं के पार करने तथा निष्ठाएं बदलने की योग्यता की अवश्य रक्षा करनी चाहिए । किन्तु उसे उपसमूहों के बीच संचलन विनियमित करने वाले सिद्धांतों की रोशनी में, उन समूहों के भीतर व्यवहारों को पुर्नरचित करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए, (पृ. 522) । गाल्टस्टन भी समूह की विविधता को सीमित एवं न्यायसंगत बनाने वाले सिद्धांत को 'संघ बनाने की स्वतंत्रता'

13. इस अनुच्छेद में सभी पृष्ठ संदर्भ इसी आलेख से हैं । संदर्भ, गालस्टन (1989)

कहते हैं (पृ. 531 - 34) । यदि राज्य 'प्रवेश एवं त्यागने की स्वतंत्रता' की रक्षा करता है तो अल्प संख्यकों के अधिकार उदारता की शर्तों से बंधे नहीं होते हैं ..... समूह अपनी आन्तरिक संरचना और व्यवहार में अनुदार हो सकते हैं; (पृ. 533)। गाल्स्टन कहते हैं कि समूह अनुदार हो सकते हैं क्योंकि उदार जनतंत्र वैयक्तिक-स्वायत्तता को प्राथमिकता नहीं देता है । स्वायत्तता का विचार जिस जीवन-शैली का प्रतिनिधित्व करता है, वह अन्य जीवन-शैलियों से बेहतर नहीं है । (पृ. 533) 'स्वायत्तता उदार समाजों में अस्तित्व का एक संभव ढंग है ..... अन्यों के बीच एक । इसके प्रयोग की रक्षा अवश्य होनी चाहिए किन्तु स्वायत्तता के भक्तों को उन व्यक्तियों तथा समूहों के साथ सम्मानपूर्ण सहअस्तित्व की जरूरत को भी अवश्य स्वीकार करना चाहिए, जो स्वायत्तता को बहुत अधिक महत्व नहीं देते हैं ।' (पृ. 525)

गाल्स्टन के अनुसार, जब तक राज्य प्रवेश एवं त्यागने की स्वतंत्रता की रक्षा करने की स्थिति में है, तभी तक सांस्कृतिक-अल्पसंख्यकों के अधिकार, जिनमें शैक्षिक अधिकार भी शामिल है, स्वीकार्य हैं । विशेष रूप से 'त्यागने के सार्थक अधिकार' की रक्षा जरूरी है (पृ. 533-34) । कूकाथस के विपरीत गाल्स्टन यह मानते हैं कि खुला एवं उदार बड़ा समुदाय कोई प्रत्याभूति गारंटी नहीं है। 'त्यागने की स्वतंत्रता' की रक्षा के लिए उदार जनतांत्रिक राज्य को 'ज्ञान की स्थितियों', 'सामर्थ्य की स्थितियों', 'मनोवैज्ञानिक स्थितियों' और 'उपयुक्तता की स्थितियों' की निगरानी अवश्य करनी चाहिए । हरेक को अपनी जीवन-शैली से भिन्न जीवन-शैली का ज्ञान अवश्य होना चाहिए, (ज्ञान), हरेक को अपनी जीवन-शैली से भिन्न जीवन-शैली का मूल्यांकन करने में समर्थ अवश्य होना चाहिए (सामर्थ्य), हरेक को मत-आरोपण एवं दबाब डालने के अन्य अभौतिक रूपों से अवश्य मुक्त होना चाहिए । (मनोवैज्ञानिक) और हरेक को अपनी जीवन-शैली से भिन्न जीवन-शैली को (कम से कम कुछ को) निष्पादित करने की योग्यता एवं ज्ञान अवश्य होना चाहिए (उपयुक्तता) ।

गाल्स्टन यह नहीं समझ पाते हैं कि राज्य का ऐसा करने का उत्तरदायित्व अनुदार-सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों को व्यापक शैक्षिक-सत्ता प्रदान करने के प्रयत्न के साथ असंगत है, यद्यपि यह बात बहुत साफ है । पूर्व-उल्लेखित स्थितियों की चिन्ता और उनकी रक्षा के लिए शैक्षिक मामलों में पर्याप्त शासकीय हस्तक्षेप की जरूरत होती है । सरकार को, कम से कम, यह तो देखना ही चाहिए कि ऐसे समूहों की शिक्षा-व्यवस्था में किसी बालक को अपने माता-पिताओं की जीवन-शैली के विकल्पों के प्रति अज्ञानी एवं अदूरदर्शी नहीं रखा जाये, किसी बालक को अपने माता-पिताओं की जीवन-शैली से भिन्न अन्य जीवन-शैलियों के बारे में निजी एवं अच्छी जानकारी से पूर्ण राय बनाने से नहीं रोका जाये, किसी बालक को अपने माता-पिताओं की जीवन-शैली को स्वीकार करने के लिए मनोवैज्ञानिक रूप से विवश नहीं किया जाये और किसी बालक को अपने माता-पिताओं की जीवन शैली से समानता रखने वाले प्रौढ़-जीवन के लिए ही पूरी तरह तैयार नहीं किया जाये। इसका अर्थ यह है कि यह सुनिश्चित करना सरकार का काम है कि सभी बालक ऐसी शिक्षा प्राप्त करें जो उन्हें पर्याप्त ज्ञान तथा कौशल प्राप्त कराने में सहायक हो और जो स्वायत्तता एवं तार्किकता को प्रोत्साहित करती हो । विस्तृत जानकारी तथा विभिन्न कुशलताओं के बिना बालक के पास सामर्थ्य एवं ऐसे उपकरणों की कमी हो जायेगी जो जीवन-शैली जैसी जटिल चीजों को जानने, समझने एवं आंकने के लिए जरूरी हैं । इसका परिणाम होगा अज्ञान, अकुशलता और अनुभवहीनता । यह स्थिति परिचित एवं विश्वस्त चीजों, अर्थात पैतृक और परिचित समूह-संस्कृति के साथ चिपके रहने को बढ़ावा देगी । स्वायत्तता तथा तार्किकता के बिना परिचित परिप्रेक्ष्य की ताकत को तोड़ना (चाहे अस्थाई रूप से ही सही) और सही समझे जाने वाले पहले से तैयार सांचों का (कुछ हद तक भी) अतिक्रमण करना असंभव होगा । स्वायत्तता और तार्किकता व्यक्ति को (निश्चित जीवन-शैली एवं स्वयं के अतीत व मतों से बंधे रहने के बावजूद)विभिन्न जीवन-शैलियों को समझने और उनके बारे में निर्णय करने में समर्थ बनाती हैं । स्वायत्तता एवं तार्किकता के अभाव में व्यक्ति जिस जीवन-शैली में जी रहा है, वही शैली उसे एक मात्र कल्पना-योग्य तथा जीने-योग्य लगेगी और परिचित व विश्वस्त जीवन शैली अर्थात पैतृक जीवन-शैली के प्रति खिंचाव अधिकतम होगा ।

संक्षेप में, इन शर्तों के लिए (जो गाल्स्टन के अनुसार त्यागने के अधिकार की सार्थक रक्षा से जुड़ी हुई हैं और जो सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों की भी शर्त हैं) सरकार को यह अवश्य देखना चाहिए कि शिक्षा पर्याप्त रूप से जानकारी एवं योग्यता को बढ़ाती हो और स्वायत्तता व तार्किकता को प्रोत्साहित करती हो या कम से कम उन्हें अशक्त व कुंठित नहीं करती हो । अनुदार सांस्कृतिक समुदायों को, यदि वे किसी भी मात्रा में शैक्षिक अधिकार पाने की इच्छा रखते हों, बड़े संकटों का सामना (गाल्स्टन हमें जैसा विश्वास दिलाना चाहते हैं उससे कहीं अधिक मात्रा में) करना होगा । यह प्रतीत होता है कि शायद उदार जनतंत्र स्वायत्तता को प्रोत्साहित करने में पूरी तरह सफल नहीं हो सकता और यही बात विविधतापूर्ण राज्य पर भी लागू होती है, गाल्स्टन चाहे कैसी भी तीव्रता से यह इच्छा करें कि ऐसा नहीं होगा (पृ. 525) ।

इसके प्रभावों की जानकारी के लिए प्रसिद्ध मोजर्ट और योडेर मामलों को देखें । इन मामलों में अल्पसंख्यकों के ऐसे

शैक्षिक अधिकार निहित थे जिनकी व्याप्ति, अल्पसंख्यक अधिकारों का पात्र बनने के लिए गालस्टन जिन जरूरतों (अर्थात त्यागने की स्वतंत्रता की सार्थक रक्षा) को आवश्यक मानते हैं, उनसे व्युत्पन्न सुचिन्हित मानदंडों पर बल देने से, बहुत दूर तक थी । मोजर्ट मामले में रूढ़िवादी प्रोटेस्टेण्ट माता-पिताओं ने, अन्य जीवन-शैलियों से ठोस परिचय में बाधा डालते हुए, अपनी सन्तानों की स्वायत्तता को क्षति पहुंचाने के अधिकार का दावा किया । योडेर मामले में एमिश माता-पिताओं ने, अपने बालकों की शिक्षा इस तरह सीमित करते हुए कि अन्य जीवन-शैलियाँ उनके लिए अगम्य एवं अनाकर्षक बन जायें, अपने बालकों को अपनी विशेष जीवन-शैली में दीक्षित करने के अधिकार (गाल्स्टन स्वयं भी इसका समर्थन करते हैं, पृ. 516-18) का दावा किया ।

बारीकी से परीक्षण करने पर यह ज्ञात होता है कि त्यागने की स्वतंत्रता की रक्षा उदार जनतांत्रिक राज्य पर शिक्षा में पर्याप्त मात्रा में राजकीय प्रभाव का उपयोग करने का दायित्व डालती है । नागरिक व्यवस्था संबंधी खतरों पर भी यही लागू होता है । गाल्स्टन स्वयं अनुभव करते हैं कि नागरिक-व्यवस्था संबंधी खतरे शिक्षा के क्षेत्र में राजकीय हस्तक्षेप को प्रोत्साहित करते हैं, यद्यपि वे ऐसा आभास देते हैं कि राजकीय सत्ता की थोड़ी मात्रा ही पर्याप्त होगी।

गाल्स्टन विविधता के नागरिक-व्यवस्था संबंधी खतरों से भी परिचित हैं । विविधतापूर्ण राज्य में विविधता का आदर हर कीमत पर नहीं किया जाता है । विविधता वहीं तक श्रेष्ठतम अच्छाई है, जहां तक 'उदार सामाजिक एकता' इसकी अनुमति देती है (पृ. 524) । राज्य को, एकता के हित में, विविध-रूपता में भी हस्तक्षेप का अधिकार है । उदार सामाजिक एकता का संभरण करने वाले लोक उद्देश्य ऐसे 'राजकीय अप्रतिरोध्य हित' हैं जो समूह के रिवाजों में राजकीय हस्तक्षेप का आधार प्रस्तुत करते हैं (वही) । गाल्स्टन ऐसे लोक-उद्देश्यों के तीन उदाहरण देते हैं: मानव-जीवन की रक्षा, आधारभूत सामर्थ्यों के विकास की रक्षा एवं उसे प्रोत्साहन और 'सामाजिक तार्किक़ता का विकास' - समाज, अर्थव्यवस्था तथा राज्य व्यवस्था में भागीदारी के लिए जरूरी समझदारी (पृ. 525) । तीसरा उद्देश्य शैक्षिक सत्ता के मानकीकरण को न्यायसंगत बनाता है । यह राज्य को शिक्षा के उन रूपों के विरूद्ध, जो इस मानक पर जांचने पर, बालकों को व्यवस्थित रूप से अशक्त करते दिखाई देते हैं, हस्तक्षेप की अनुमति देता है । (वही) ।

पता नहीं क्यों गाल्स्टन यह समझने में असमर्थ रहते हैं कि उनके द्वारा वर्णित दूसरे लोक-उद्देश्य के निहितार्थ, शैक्षिक सत्ता के विभाजन के लिए क्या होंगे ? क्या यह साफ नहीं है कि आधार-भूत सामर्थ्यों के विकास की सार्वजनिक रक्षा और उसे प्रोत्साहन देने के लिए राज्य द्वारा शिक्षा की विषयवस्तु एवं गुणवत्ता का नियंत्रण करना जरूरी है ? स्वायत्तता और तार्किकता को आधारभूत सामर्थ्यों के रूप में समझने के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है[14]। इनके विकास की सार्वजनिक रक्षा और उसे प्रोत्साहन का निहितार्थ उन मांगों के रूप में सामने आयेगा जिनका दावा राज्य शिक्षा व्यवस्था से कर सकता है । इस निहितार्थ के गाल्स्टन के प्रस्ताव के विरुद्ध होने की संभावना है । किन्तु वे शुरू में ही, और बिना किसी तर्कसंगति के, इस तरह की समस्या को (आधारभूत सामर्थ्यों को अतिशय छिछले रूप में संकल्पित करते हुए) एक ओर हटा देते हैं। वे सिर्फ कुछ भौतिक प्रकार्यों को इसमें शामिल करते हैं । (वही)

गाल्स्टन के अनुसार शैक्षिक-सत्ता के विभाजन के लिए प्रासांगिक एक मात्र लोक-उद्देश्य सामाजिक तार्किकता का विकास है । सामाजिक तार्किकता के विकास का महत्व विविधतापूर्ण राज्य की आधारभूत संरचना के साथ निकटता से जुड़ा है । इस आधारभूत संरचना की एक विशेषता, अन्य चीजों के साथ, 'नागरिक शिक्षा की स्वस्थ सुव्यवस्था' है (पृ. 528) । ऐसी शिक्षा सहिष्णुता सिखाती है ----- और व्यक्तियों को उन गुणों एवं सक्षमताओं से लैस होने में सहायता करती है, जिनकी उन्हें उदार अर्थव्यवस्था, समाज तथा राज्य-व्यवस्था के सदस्यों के रूप में कार्य करने के लिए जरूरत होगी (वही) । इस कारण उदार जनतंत्र में राज्य का 'यह सुनिश्चित करने में वैधानिक एवं अप्रतिरोध्य हित होता है कि उदार नागरिकता के लिए आवश्यक विश्वासों, क्षमताओं तथा गुणों की समाज में व्यापक भागीदारी हो' । 'राज्य इस हित के अनुवर्तन में शैक्षिक मार्ग निर्देश भी जारी कर सकता है' (पृ. 529) ।

गाल्स्टन, इस मामले में, अपने विचारों के निहितार्थों की व्याप्ति के बारे में गलतफहमी में दिखाई देते हैं । सामाजिक तार्किकता और नागरिक शिक्षा के विकास में वह सब शामिल है जिसे 'सामान्य एवं उदार शिक्षा' के रूप में आमतौर से वर्णित किया जाता है। उदार जनतांत्रिक समाज, अर्थ व्यवस्था एवं राजनीति में भागीदारी के लिए जरूरी समझ, क्षमताएं, विश्वास एवं गुणों की प्राप्ति तथा उनका संचारण भी इसमें शामिल है[15] । शिक्षा के मामले में सार्वजनिक अधिकार यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त हो सकता है या अवश्य होता है कि सभी बालक, चाहे उनकी उत्पत्ति, लिंग तथा जातीय या सांस्कृतिक पृष्ठभूमि कुछ भी हो, 'सामान्य एवं उदार शिक्षा' प्राप्त करें । यही मानक उन दार्शनिकों एवं शैक्षिक विचारकों, जैसे गुटमान, क्रिटेण्डन, मेयजर और इमेल्मान, द्वारा भी

14. संदर्भ, वानडेर प्लोग, 1995

15. 'सामान्य और उदार शिक्षा' पर बहस एवं सिद्धांतों के लिए देखिए, उदाहरण के लिए, बेयले 1984, बारोव और व्हिटे, 1993 .

स्वीकार किया गया है, जो अनुदार अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अधिकारों के प्रति थोड़ा ही आदर दिखाते हैं और जो सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा शिक्षा शास्त्रीय, जनतांत्रिक एवं उदार सिद्धांतों के आधार पर शिक्षा के प्रभावशाली मानकीकरण का समर्थन करते हैं [16] । यही वास्तव में गाल्स्टन के विचारों का निहितार्थ है । बहुल, उदार-जनतांत्रिक समाज, अर्थ-व्यवस्था एवं राजनीति में भागीदारी, जहां तक ज्ञान, तत्परता एवं योग्यताओं का संबंध है, बहुत अधिक अपेक्षा रखती है। 'सामान्य एवं उदार शिक्षा' ठोस तथा औपचारिक दोनों ही अर्थों में अपेक्षा रखती है । ठोस रूप में, उदाहरण के लिए, यह शिक्षा सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ को प्रतिबिम्बित करने वाले ऐसे पाठयक्रम की अपेक्षा रखती है जो अपने कार्यक्षेत्र, जटिलता एवं विविधता के साथ न्याय कर सके और इसके द्वारा प्रस्तुत अवसरों, समस्याओं, विवादों तथा इससे उत्पन्न कार्यों का पूर्व अनुमान कर सके । औपचारिक रूप में, उदाहरण के लिए, यह तार्किकता व्यापक ज्ञान, खुलेपन, आत्मालोचना, अभिव्यक्त करने की योग्यता, विभिन्न प्रकार के मतों एवं जीवन-शैलियों वाले व्यक्तियों के प्रति आदरभाव, उत्तरदायित्व की भावना आदि को प्रोत्साहित करने वाले शिक्षा रूपों की मांग करती है[17] ।

सभी बालक ऐसी शिक्षा प्राप्त करें जो उन्हें पर्याप्त ज्ञान तथा कौशल प्राप्त कराने में सहायक हो और जो स्वायत्तता एवं तार्किकता को प्रोत्साहित करती हो । विस्तृत जानकारी तथा विभिन्न कुशलताओं के बिना बालक के पास सामर्थ्य एवं ऐसे उपकरणों की कमी हो जायेगी जो जीवन–शैली जैसी जटिल चीजों को जानने, समझने एवं आंकने के लिए जरूरी हैं ।

गाल्स्टन की दलील के अन्तर्निहित प्रतिबल उनके सामान्य उद्देश्य का खंडन करता है क्योंकि इसका अर्थ सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों, विशेषरूप से अनुदार अल्पसंख्यकों को शैक्षिक-सत्ता प्रदान करने तथा शिक्षा के संबंध में व्यापक अनुबंध करने में अनिच्छा दिखाना है । दूसरी ओर, वे स्वयं को अल्प-संख्यकों की व्यापक शैक्षिक-अधिकारों के पक्ष में दलील करते प्रदर्शित करते हैं । वे कहते हैं कि उदार-विचार धाराओं तथा जीवन शैलियों का, उनके अनुदार प्रतिपक्षियों की कीमत पर, व्यवस्थित रूप से पक्ष नहीं लिया जाना चाहिए ।

कुल मिलाकर, गाल्स्टन के विवेचन में अनुदार समुदाय, कैम्लिक्का की तुलना में, अधिक अच्छी स्थिति में नहीं हैं और यह गाल्स्टन को क्षुब्ध करता है । जैसा कि सर्वज्ञात है कैम्लिक्का द्वारा प्रस्तुत अल्पसंख्यक-सस्कृतियों की रक्षा की तर्क संगतता (1989) सांस्कृतिक अधिकारों का पात्र बनने के लिए उदार समुदायों अथवा समुदायों के उदारीकरण की ओर ही जाती है । कैम्लिक्का, निश्चय ही, इससे इनकार नहीं करते हैं[18] । इस मुद्दे पर उनकी एक से अधिक बार आलोचना हुई है[19] । अनुदार समुदाय ही वे समुदाय हैं जो अपनी परंपरागत संस्कृति की रक्षा के लिए अल्पसंख्यकों के अधिकारों की मांग करते हैं । वे सांस्कृतिक अधिकारों की सहायता से उदारीकरण के निवारण की कल्पना करते हैं । अत: रक्षात्मक सांस्कृतिक अधिकार प्राप्त करने के लिए, उदारीकरण मुश्किल से ही एक शर्त के रूप में उन्हें मान्य हो सकता है क्योंकि यह उनकी सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण को खतरा उत्पन्न करता है । गाल्स्टन का फैसला कठोर है। कैम्लिक्का का सुझाव, जो अल्पसंख्यक संस्कृतियों के पक्ष में झुका दिखाई देता है, परिणाम में उनके विरुद्ध सिद्ध होता है । कैम्लिक्का जिसे उदारीकरण कहते हैं, वह बहुत से मामलों में आधारभूत समूह-पहचान के बलकृत बदलाव के समान है । यह वियतनाम-युद्ध के दिनों के 'गांव को बचाने के लिए उसे नष्ट करना' के सिद्धांत का सांस्कृतिक समानार्थी सिद्ध होता है (पृ.522-23)।

लेकिन, जैसा कि कहा गया है, गाल्स्टन जिस ढंग से अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अधिकारों का समर्थन करते हैं, उसका परिणाम भी यही निकलता है। अल्पसंख्यकों के शैक्षिक- अधिकारों की उनकी तर्क-संगति का अर्थ, अन्त में, यही होता है कि सांस्कृतिक समुदाय उनका दावा, स्पष्ट रूप से उदार मानकों को स्वीकार करने के बाद ही कर सकते हैं । यदि 'सामान्य और उदार शिक्षा' ही कसौटी है अथवा उसे अपने स्वयं की परम्परागत शिक्षा के साथ सहन करना ही होगा (गाल्स्टन यही कहते हैं) तो कोई भी अनुदार समुदाय, अपनी संस्कृति के भविष्य की गारण्टी करने के लिए, उसे शुद्ध एवं अमिश्रित रूप में संप्रेषित करने के लिए स्वतंत्र नहीं होगा ।

निष्कर्ष

यदि वैयक्तिक स्वतंत्रता और अधिकारों को मूल्यवान (चाहे

16. गुटमान; 1987, 1989; क्रिटैण्डन 1988; इमेल्मान और टोल्समा, 1987; इमेल्मान, 1995; मेयजर, 1988; मेयजर, बेन्नेर और इमेल्मान, 1992; वानडेर प्लोग , 1995

17. संदर्भ, वानडेर प्लोग, 1951

18. कैम्लिक्का, 1989, पृष्ठ 167-170

19. उदाहरण के लिए कूकाथस 1992 ए और बी; टोमासी, 1995, वानडेर प्लोग, 1995; गालेन काम्प, 1993

कम ही) समझा जाता है और जनतंत्र के भविष्य की चिन्ता की जाती है तो अपने समुदाय के भीतर व्यापक अथवा अनन्य शैक्षिक-सत्ता का (अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक अधिकार के रूप में) मुश्किल से ही समर्थन किया जा सकता है । अनुदार समुदायों पर तो यह बहुत निश्चत रूप से लागू होता है । उदारता एवं नागरिक व्यवस्था संबंधी खतरे जनतांत्रिक राज्य को शैक्षिक मानक निश्चित करने तथा शिक्षा-व्यवस्था की निगरानी करने के लिए उद्यत करते हैं । यह राजकीय हस्तक्षेप अल्पसंख्यकों के व्यापक शैक्षिक अधिकारों से असंगत है । अनुदार अल्पसंख्यकों को ऐसे अधिकार मांगने का कोई अधिकार नहीं है, तब भी नहीं, जब वे सांस्कृतिक पहचान की संरक्षा के लिए आवश्यक हों ।

क्या यह बहुत बुरा है ? वास्तव में नहीं - यह वह कीमत है, जो बहुलवादी जनतंत्र के भविष्य और व्यक्ति के अधिकारों एवं स्वतंत्रता की सार्वजनिक चिन्ता के लिए देय है । अनुदार अल्पसंख्यकों के लिए (अन्य समूहों की तुलना में) यह कीमत ज्यादा बड़ी है । किन्तु मासेडो के शब्दों में 'एक विविधता-पूर्ण समाज में जीवन का मूल्य देना ही होगा' । (1995 बी, पृ. 227)। ऐसी राजनैतिक व्यवस्था में, जो सांस्कृतिक विविधता की चिन्ता करती है, अल्पसंख्यक समूहों के सदस्य निश्चित ही लाभ में रहेंगे । ऐसी राजनैतिक व्यवस्था में, जो विविधता को महत्व नहीं देती है, उनका क्या अस्तित्व रहेगा ?

तामिर की राय में[20] बहुलवादी उदार जनतंत्र में, अनुदार समुदायों से बहुत अधिक अपेक्षाएं रखी जाती हैं (पृ.166-71)। वे सोचती हैं कि उदार सांस्कृतिक समुदायों तथा जनतांत्रिक राज्य के लिए यह अच्छी बात होगी कि वे अनुदार समुदायों के प्रति अधिक उदार बनें ।

'स्वायत्तता आधारित उदारवाद' को (जो स्वायत्तता की समर्थक संस्कृतियों को ही सहन और उनका समर्थन करता है) सन्दर्भ बिन्दु बनाने के बदले बेहतर है कि'अधिकार आधारित उदारवाद' को आरंभ बिन्दु बनाया जाये (पृ. 168) । ऐसा उदारवाद, स्वायत्तता के दावे और वरण के विशेषाधिकारों में निहित अधिकारों का विचार किए बिना, व्यक्ति के अधिकारों के प्रति संवेदनशील होता है (वही) । 'वे मर्यादित अनुदार संस्कृतियां, जो वैयक्तिक स्वायत्तता के आदर्श का पोषण नहीं करती है, ऐसे उदारवाद की चिन्ता नहीं करती हैं' (वही) । ऐसा उदारवाद 'व्यक्तियों, उनकी प्राथमिकताओं तथा हितों (चाहे उनका निर्माण कैसे ही हुआ हो) के लिए समान आदर एवं चिन्ता के प्रति अपनी प्रतिबद्धता हेतु जाना जाता है' (वही) । तामिर 'सघन संस्कृतिवाद 'का प्रतिपादन करती हैं । इससे उनका अर्थ है, ऐसा समाज जिसमें उदार एवं अनुदार समुदाय एक-दूसरे की उपस्थिति में संतुष्ट रहते हुए, एक-दूसरे को सहन करते हुए, एक-दूसरे को एकान्त देते हुए साथ-साथ रहते हैं । यह एक 'सशर्त जीवनचर्या' है जो उदार समुदायों की ओर से आदर तथा अनुदार समुदायों की ओर से अल्पमत होने की अपनी स्थिति की अनुपालना पर आधारित है । इसका अर्थ यह है कि उदार समूहों को अनुदार संस्कृतियों से अपनी अपेक्षाएं और मांग दोनों को सीमित करना चाहिए (पृ.171) ।

इस आलेख में मेरा उद्देश्य यह दलील देना था कि तामिर जैसों के विचार गलत हैं, चाहे वे कितने ही लोकप्रिय हों । तामिर (और टोमासी एवं कूकाथस भी) नागरिक-व्यवस्था संबंधी खतरों को गंभीरता से ग्रहण करने में असफल रहते हैं । उनकी दृष्टि में, अनुदार समुदायों के बालकों का किसी तरह की नागरिक शिक्षा प्राप्त करना जरूरी नही है । 'सघन बहुसंस्कृतिवाद' और 'विरल बहुसंस्कृतिवाद' में यही अंतर है। 'विरल बहुसंस्कृतिवाद' यह पूर्व अपेक्षा करता है कि सभी समूहों के सभी बालक नागरिक शिक्षा के साथ अपनी सामुदायिक शिक्षा भी प्राप्त करेंगे । तामिर उदारता संबंधी खतरों को भी गंभीरता से नहीं लेती हैं । टोमासी के समान वे भी ऐसे सांस्कृतिक अधिकार (जो व्यक्ति के अधिकारों को खतरे में डाल सकते हैं) मांगने वाले समूहों की अनुदार-समूहों के रूप में (स्व) परिभाषा में किसी भी तरह की कठिनाइयां देखने में असफल रहती है । यही नहीं, उनका 'अधिकार आधारित उदारवाद' भी (टोमासी एवं गाल्स्टन के समान) स्वतंत्रता की अस्पष्ट एवं सतही अवधारणा पर आधारित है । इस अवधारणा से यह निष्कर्ष निकलता प्रतीत होता है कि न तो स्वायत्तता और न ही तार्किकता स्वैच्छिकता की शर्त हैं; कि समनुमति ही अपने आप में इसका पर्याप्त लक्षण है । यह महत्वपूर्ण नहीं है कि कोई किसी विशेष जीवन-शैली से या किन्हीं विशेष प्राथमिकताओं से कैसे सहमत हुआ है । अन्त में, तामिर समुदाय तथा उनके बालकों और माता-पिता तथा उनके बालकों के बीच संबंधों की अतिशय समस्यामूलक प्रकृति की पूरी तरह उपेक्षा करती है। टोमासी, कूकाथस और गाल्स्टन भी ऐसा ही करते हैं । ◆

पत्र व्यवहार : पिएट ए. वानडेर प्लोयग, उट्रेख्त विश्वविद्यालय, शैक्षिक-विज्ञानों का विभाग, पीबी 80.140, (एन.एल.) 3508 टी.सी. उट्रेख्त, नीदरलैण्ड । ◆

20. इस अनुच्छेद में सभी पृष्ठ संदर्भ इसी आलेख से हैं ।